



Date: 28-05-24

Chabahar's opportunities and challenges

The geopolitics around India's play in Chabahar and Iran's leverages are interesting

Kabir Taneja is Fellow, Strategic Studies Programme, Observer Research Foundation

The recently concluded contract between India and Iran, which gives New Delhi rights to invest in and operate the Shahid-Behesti terminal at Chabahar Port for another 10 years, has created many headlines. The port remains the crown project anchoring economic relations between the two countries. The deal came at a precarious time in West Asia as the war in Gaza continues unabated, Israel-Iran tensions remain critical, and the passing of Iran's President and Foreign Minister in a helicopter accident challenges domestic politics in Tehran.

Representative of India's thinking

There is no denying that the Chabahar project is an important endeavour for both economic and strategic reasons. At the core of it, Chabahar, for India, represents its thinking from the perspective of an extended neighbourhood, and not necessarily as part of its West Asia outlook. The port is a fulcrum of the International North-South Transport Corridor, a project looking towards seamlessly linking India with Central Asia and Russia, bypassing Pakistan. Beyond this, Chabahar is also astutely tuned into the 'new' realities of Afghanistan. The Taliban-led interim government in Kabul has also thrown its weight behind the port, offering an investment of \$35 million as it looks to secure alternatives and not be economically reliant on Pakistani ports such as Karachi or the China-backed Gwadar. In November 2023, Taliban leader Mullah Baradar visited Chabahar, with Shahid-Behesti visible in the background.

Bilaterally for India and Iran, Chabahar is also a symptom of challenges between the two states. While there is a lot of public championing for the project, and for good reasons, if it was not for Chabahar, India-Iran ties today would look extremely dry. The reasons are multifaceted and tied to both country's views of their national, regional, and geopolitical interests. Instead of expanding projects and economic cooperation beyond Chabahar, many older ones, such as the gas field Farzad-B which was discovered by Indian state-owned enterprise ONGC Videsh, have now been written off. Another old bilateral platform, the IranoHind shipping company, was dissolved in 2013 because of sanctions. Chabahar, is a legacy project, which has its foundations going back to 2003. This was an era when India was opening to developing economic assets abroad. Chabahar in Iran was one, Sakhalin-I in Russia, was another.

A reflection of diplomacy

The geopolitics today that surrounds India's play in Chabahar, and Iran's leverages, make for an interesting study. This latest iteration of the deal was signed not too long after both Israel and Iran exchanged missile fire and came critically close to a full-scale conflict. India's Adani Group, meanwhile, has also invested in a large port project in Israel. The company bought Israel's Haifa port on the Mediterranean Sea for \$1.2 billion. This was also made possible in part due to India's participation in new

diplomatic and economic endeavours with the United States, Israel, and Arab partners, such as the I2U2 and India-Middle East-Europe Economic Corridor.

The fact that India's buy-in into Haifa was not a constraint for the Chabahar deal to go through is not only a testament to Indian diplomacy but also for the U.S. to also recognise that this kind of access which New Delhi has is beneficial, and not detrimental, to Washington.

Recent remarks from the U.S. over potential sanctions against Chabahar stand out as myopic. India's relations with Iran and the continuity of Chabahar's development, which offers access to difficult political terrain such as Central Asia, and even Afghanistan, could bring in a significant level of integration and help in building alternatives to China-backed projects. Despite public discourse, China's heavy financial might and the 2021 strategic deal with Iran, does not automatically make Tehran subservient to Beijing. Iran is a quintessential survivalist state and plays a diverse set of cards in its playbook of geopolitics.

The Biden administration would benefit by not blindly following former U.S. President Barack Obama's doctrine on how to deal with India-Iran ties, and Chabahar, at its centre. New Delhi burnt its fingers by giving Mr. Obama too much room when it completely stopped importing oil from Iran. This took Tehran, consistently among India's top-two suppliers of oil for decades, out of the top 10. Even if India's thinking was to build influence in Washington around the nuclear deal negotiations, Donald Trump as the U.S. President and the unilateral exit of the U.S. under his watch from the Joint Comprehensive Plan of Action (JCPOA) in 2018, recalibrated how non-partisanship and the stability of critical U.S. foreign policies were to be viewed thereafter.

The bigger picture

Finally, for Chabahar, there are two main points to consider moving forward. First, the port project cannot be the singular major play in the bilateral relationship. This concentration of interests is volatile. Second, the U.S. must move towards being accommodative on sanctions against Chabahar. Viewing the port as a collateral against problematic Iranian policies in West Asia would not be an accurate understanding of the big picture of India's own outreach towards its extended neighbourhood which could benefit larger American aims as well.

This is important to be considered at a time when the U.S. itself maintains a channel with the Iranians not only through Swiss intermediators but, increasingly, through Oman and Qatar as well.



Date: 28-05-24

हम अपने बच्चों को कैसे बड़ा कर रहे हैं

चेतन भगत, (अंग्रेजी के उपन्यासकार)

पुणे में एक धनाढ्य परिवार के 17 वर्षीय लड़के ने नशे में धुत होकर तेज गति से कार चलाते हुए दो बाइक सवारों को टक्कर मार दी, जिससे एक युवक और युवती की मौत हो गई। इस एक वाक्य में ही बहुत सारी गड़बड़ियां हैं। अक्वल तो 17 साल के किसी लड़के को गाड़ी नहीं चलानी चाहिए। दूसरे, 17 साल के किसी लड़के को शराब नहीं पीनी चाहिए (महाराष्ट्र में- जहां यह घटना घटी- शराब पीने की न्यूनतम उम्र 25 वर्ष है)। और तीसरे, किसी भी उम्र के व्यक्ति को शराब पीकर तो हरगिज गाड़ी नहीं चलानी चाहिए। और इसके बावजूद, इस पोर्श कार वाले लड़के ने यह सब किया।

लड़का नाबालिग है (उसके 18 वर्ष का होने में अभी 4 महीने शेष हैं), इसलिए उस पर जुवेनाइल जस्टिस बोर्ड में मामला दर्ज किया गया। ऐसे मामलों में माता-पिता को उत्तरदायी माना जाता है। 'पोर्श-बॉय' जमानत का पात्र था, इसलिए उसे सड़क सुरक्षा पर 300 शब्दों का निबंध लिखने के असाइनमेंट के साथ तुरंत छुट्टी मिल गई। लेकिन मामला संगीन था। एक अमीर बिल्डर का शराबी बेटा 2 करोड़ की कार चलाते हुए दो होनहार आईटी पेशेवरों को रौंद देता है और उनके परिवारों को कभी न खत्म होने वाला दर्द दे देता है। घटना के बाद भारी आक्रोश फैल गया। आरोपी के लिए कड़ी से कड़ी और तत्काल सजा की मांग की गई। पूरे पुणे के पब बंद कर दिए गए। इस सब से आक्रोश की अभिव्यक्ति तो हो जाती है, पर समस्या हल नहीं होती।

समाधान केवल अधिक सख्त किशोर-कानूनों से नहीं होगा। समस्या की जड़ इसमें है कि हम अपने बच्चों की पैरेंटिंग कैसे करते हैं। भारत की प्रति व्यक्ति जीडीपी के साथ ही समृद्ध भारतीयों की संख्या भी पिछले कुछ दशकों में कई गुना बढ़ गई है। इस समृद्धि का स्वागत किया जाना चाहिए, लेकिन यह अपने साथ कुछ बड़ी समस्याएं भी लेकर आती है। इनमें से एक प्रमुख समस्या है- बच्चों की एक स्वस्थ माहौल में परवरिश करना।

चाहे जैसी भी आय-स्तर वाला व्यक्ति हो, पैरेंटिंग सभी के लिए कठिन है। यहां कोई यूजर-मैनुअल, स्टैंडर्ड ऑपरेटिंग सिस्टम या प्रैक्टिस-गाइड काम नहीं आती। अगर हम बच्चे पर बहुत अधिक सख्त होते हैं, तो उसकी स्वतंत्रता और विकास को नुकसान पहुंच सकते हैं। अगर बच्चे के प्रति अत्यधिक उदार होते हैं, तो उसे सीमाओं और अनुशासन के बारे में पता नहीं चल पाता। अब मान लें कि उदारता समृद्धि का परिणाम है, जिसमें बच्चे की हर मांग पूरी की जाती है। जिसमें माता-पिता सोचते हैं कि बच्चे को प्यार करने का मतलब है उसे अधिक से अधिक संसाधन, पैसा और सेवाएं प्रदान करना और उसके रास्ते में आने वाली हर बाधा को दूर करना। ऐसे में बच्चा एक ऐसे गुस्सैल, 'एनटाइटल्ड' व्यक्ति के रूप में बड़ा हो सकता है, जो अपनी पसंद की हर चीज को हासिल करने का आदी है। ऐसे में अत्यधिक-उपभोग, कम उम्र में शराब पीना और गाड़ी चलाना, अधिकारपूर्ण-व्यवहार के बावजूद बच्चा एक दुःखी व्यक्ति के रूप में बड़ा होता है। उसकी परवरिश बिना किसी संघर्ष के और निरंतर सुख की तलाश के माहौल में होती है और यह तथाकथित लज्जरियस जीवन वास्तव में बरबादी का नुस्खा है।

अगर पुणे वाली वह दुर्घटना नहीं भी हुई होती, तब भी वह 'पोर्श-बॉय' पहले ही शराबी बन चुका था। वह रात 2 बजे शहर के पबों में अल्कोहल पर ही लाखों खर्च कर रहा था। समय के साथ, इस बात की पूरी सम्भावना थी कि वह ड्रग्स का आदी हो जाता, क्योंकि एक सीमा के बाद शराब उतना 'हाई' फील कराना बंद कर देती है। इसी 'हाई-चेसिंग', 'थ्रिल-सीकिंग' व्यवहार के कारण उसे अंधाधुंध गति से गाड़ी चलाने की जरूरत महसूस हुई होगी। जब जीवन में पैसे खर्च करने और उपभोग करने के अलावा कोई और चुनौती, उद्देश्य या प्रयोजन नहीं होता, तो आप हादसों की ओर ही बढ़ रहे होते हैं।

ऐसे में माता-पिता के लिए यह बहुत जरूरी हो गया है कि अपने बच्चों को अनुशासन और सही मूल्यों के साथ बड़ा करें। बच्चे पर भौतिक वस्तुएं न्योछावर कर देना ही प्यार नहीं है। किसी बच्चे को जल्द ही शराब पीने की अनुमति दे देना 'कूल' होना नहीं है। पैरेंटिंग दो चीजों के बीच संतुलन बनाने के बारे में है- सहानुभूति और सीमाएं। 'हां बेटा, मुझे पता है तुम बोरियत महसूस कर रहे होगे'- ये कहना सहानुभूतिपूर्ण है। लेकिन साथ ही हमें यह भी कहना होगा कि 'बोरियत मिटाने के लिए घंटों अपने फोन पर मत रहो, कोई खेल खेलो या किताब पढ़ो।' तब आप सीमाएं निर्धारित कर रहे होते हैं। एक और उदाहरण देखें। ये कहना कि 'हां बेटा, मुझे पता है कि दूसरे बच्चे महंगे ब्रांड्स का उपयोग करते हैं, जिससे तुम खुद को हीन महसूस करते हो,' सहानुभूति का प्रदर्शन करना है। लेकिन इसके साथ यह जोड़ देना कि 'अलबत्ता मैं तुम्हें डिजाइनर बैग खरीदकर नहीं दे सकता क्योंकि तुम अभी उसके लिए बहुत छोटे हो,' सीमाएं तय करना है। या, 'पोर्श बहुत शानदार कार है, लेकिन अभी तुम स्पोर्ट्स कार चलाने के बजाय पढ़ाई और दूसरे लक्ष्यों पर ध्यान दो।'

'पोर्श-बॉय' के मामले में ऐसी सीमाओं का निर्धारण नहीं किया गया था। आज ऐसे अनेक समृद्ध भारतीय माता-पिता हैं, जो बच्चे की मांगों के आगे झुक जाते हैं। वे प्यार के नाम पर या बच्चे से रिश्ते खराब न करने के लिए हार मान लेते हैं। लेकिन उन्हें याद रखना चाहिए कि सही सीमाएं तय करने से रिश्ते खराब नहीं होते। वास्तव में, हमारे बच्चे तो चाहते हैं कि हम उनके लिए ऊंची सीमाएं तय करें, जो उन्हें दुनिया में मुकाम बनाने में मदद करती हों।

Date: 28-05-24

इस बार के आम चुनाव पिछले दो चुनावों से बहुत अलग हैं

रुचिर शर्मा ग्लोबल (इन्वेस्टर व बेस्टसेलिंग राइटर)



नरेंद्र मोदी लहर पैदा करना बखूबी जानते हैं! दस साल पहले उन्होंने भाजपा को पहली बार लोकसभा में पूर्ण बहुमत दिलाया था। पांच साल बाद राष्ट्रवादी भावनाओं के उफान के बूते उन्होंने अपने बहुमत को और अधिक निर्णायक बहुमत में बदल दिया। यही कारण था कि जब प्रधानमंत्री, उनकी पार्टी और सर्वेक्षणों ने इस बार एक और बड़ी जीत की भविष्यवाणी करना शुरू किया तो कुछ ही लोगों ने इस पर संदेह जताया था। कम से कम मैंने तो निश्चित रूप से इस पर संशय नहीं किया था।

लेकिन उसके बाद मैं अपने 20 मीडिया सहयोगियों के एक समूह के साथ चुनावी दौरों पर निकला। हमने आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, कर्नाटक और महाराष्ट्र राज्यों को पार करते हुए पूर्वी तट से पश्चिम तक चल रहे चुनाव-अभियानों पर नजर रखी। और जैसा कि अक्सर होता है, परंपरागत सूझ-बूझ हमेशा ही सड़कों पर होने वाले रियलिटी-टेस्ट से मेल नहीं खाती। ठीक उसी तरह, आठ दिनों में इस 2,000 किमी की यात्रा के दौरान हमें कहीं भी लहर जैसी कोई चीज नजर नहीं आई।

लेकिन इसके साथ ही हमें प्रधानमंत्री के खिलाफ कोई विशेष नाराजगी भी नहीं दिखाई दी। यह राष्ट्रीय राजनीति में मोदी के उदय से पहले के दौर की तरह था, जब स्थानीय मुद्दों और नेताओं पर ध्यान केंद्रित किया जाता था और इसके नई

दिल्ली में क्या मायने निकलेंगे, इस पर बाद में विचार किया जाता था। शहरी मध्यम वर्ग मोदी के तीसरे कार्यकाल के लिए इस आधार पर उत्साहित है कि तेजी से विकसित हो रही अर्थव्यवस्था भारत के वैश्विक कद को बढ़ा रही है। लेकिन बहुतेरे ग्रामीण मतदाता ऐसा नहीं सोचते। मोदी के राज में गरीबों के लिए सब्सिडी दोगुनी होने के बावजूद वे अभी भी बढ़ती कीमतों से रोजमर्रा के जीवन पर आए संकट और अधिक सरकारी राहत की तत्काल आवश्यकता की बात करते हैं। हां, चमचमाते हुए नए एक्सप्रेस-वे जरूर बनाए गए हैं, लेकिन उनमें से हरेक शहरी-विकास की इस तरह की विसंगतियों का सामना कर रहा होता है कि हम दो शहरों के बीच केवल 50 किमी प्रति घंटे की औसत गति ही हासिल कर पाए हैं- जो कि एक-चौथाई सदी पहले भी इतनी ही थी।

हमारी यात्रा आंध्र प्रदेश से शुरू हुई थी, जहां मतदाताओं ने पूछे जाने तक प्रधानमंत्री का जिक्र नहीं किया। राजमुंदरी में मोदी की रैली थी, लेकिन मतदाताओं ने एनडीए के पवन कल्याण- एक क्षेत्रीय फिल्म स्टार, जिन्होंने अपनी पार्टी लॉन्च की है- का ज्यादा बड़ा स्वागत किया। अक्सर रैली में आने वालों का एक समूह ऐसा होता है, जो सिर्फ मशहूर हस्तियों को उनके हेलीकॉप्टरों से उतरते देखने के लिए आते हैं। वहीं कुछ श्रोता तेलुगु में कल्याण का जोशीला भाषण सुनने के बाद चले गए। इसके तीन दिन बाद हम हैदराबाद पहुंचे, जहां कांग्रेस पार्टी के मुख्यमंत्री रेवंत रेड्डी ने कहा कि केवल छह महीने के कार्यकाल के बाद ही वे दबाव में हैं, क्योंकि देश 'स्विगी' राजनीति की चपेट में है। वे सार्वजनिक लाभ की तत्काल डिलीवरी की अपेक्षाओं की ओर संकेत कर रहे थे।

दुनिया के विश्लेषक भारत के बारे में बात करते हुए विचारधारा पर बहुत जोर देते हैं, जबकि वे भारतीय राजनीति की बढ़ती 'ट्रांसैक्शन' की गुणवत्ता को चूक जाते हैं। जैसा कि रेड्डी ने हमें बताया कि 'विचारधारा लाइब्रेरियों के लिए होती है!' पार्टियां और मतदाता तो अक्सर विशुद्ध निजी हितों से प्रेरित होते हैं। एक गणना के अनुसार, देश भर में भाजपा के लगभग चार में से एक उम्मीदवार विपक्षी पार्टियों से आए हुए नए सदस्य हैं- उनकी हिंदुत्व की विचारधारा के प्रति अतीत में कोई प्रतिबद्धता नहीं रही है।

यात्रा के दूसरे चरण में हम कर्नाटक गए, जहां के चमचमाते घर और चौड़ी सड़कें उसकी बढ़ती समृद्धि का संकेत दे रहे थे। जबकि महाराष्ट्र में हाई-वे गड़कों से भरे थे। कभी प्रति व्यक्ति आय के हिसाब से देश का दूसरा सबसे अमीर राज्य रहा महाराष्ट्र अब शीर्ष दस से बाहर हो गया है। और उसकी गिरावट निरंतर जारी है, जबकि कर्नाटक और तेलंगाना में तेजी आई है। अब वे क्रमशः तीसरे और दूसरे स्थान पर हैं। स्थानीय परिस्थितियां ही स्थानीय मनोदशा का निर्माण करती हैं। सोलापुर में चेंबर ऑफ कॉमर्स के एक प्रतिनिधि ने हमें बताया कि महाराष्ट्र में उद्योग-क्षेत्र कमजोर हो गया है और नौकरियां इतनी कम हैं कि हजारों की संख्या में युवा पलायन कर रहे हैं। यहां किसानों की आत्महत्याओं का मुद्दा विशेष रूप से गंभीर है।

भारत आज भी विभिन्न राज्यों का समूह बना हुआ है, और सबसे करिश्माई और ताकतवर लोगों के लिए भी पूरी तरह से उस पर हावी होना कठिन है। हालांकि मोदी के तीसरे कार्यकाल में लौटने की संभावना कायम है, लेकिन उनकी हाइप घट सकती है। अगर इस बार भाजपा कम अंतर से चुनाव जीतती है, तो यह डर खत्म हो जाएगा कि मोदी और भाजपा जरूरत से ज्यादा मजबूत हो रहे हैं, जिससे भारतीय लोकतंत्र को खतरा है। तब इस बात पर चर्चा शुरू हो जाएगी कि वे कम जनादेश के साथ कैसे शासन कर सकते हैं।

अमेरिका और चीन का व्यापार संघर्ष

परमजीत सिंह वोहरा



बीते दिनों अमेरिका के जो बाइडेन प्रशासन ने चीनी वस्तुओं पर करों की दरें काफी बढ़ा दीं। इससे चीन और अमेरिका के बीच व्यापार युद्ध बढ़ गया है। अमेरिका ने इसे चीन की गलत वैश्विक नीतियों का परिणाम बताया है। उसने कहा है कि चीन अपनी घरेलू आर्थिक समस्याओं को पूरे विश्व तक पहुंचाने की कोशिश कर रहा है, जो कि अनुचित है और इसे बर्दाश्त नहीं किया जाएगा। सर्वविदित है कि चीन और अमेरिका की पारस्परिक लेने-देने में चीन हमेशा आगे रहा है।

आंकड़ों के मुताबिक 2022 में अमेरिका का चीन से आयात 562 अरब डालर का था, जबकि निर्यात मात्र 195 अरब डालर। यानी तब अमेरिका का चीन के साथ व्यापारिक घाटा 367 अरब डालर का था। इसे लेकर चर्चा आम रही कि अमेरिका आखिर चीन पर क्यों निर्भर है? बाद में इस पर नियंत्रण करने की कोशिश जरूर की गई, जिसके चलते वर्ष 2023 में चीन के साथ व्यापारिक घाटा घट कर 279 अरब डालर तक पहुंचा, मगर अब भी यह अमेरिका के लिए एक समस्या है।

अमेरिका में इस वर्ष चुनाव होने हैं। अक्सर देखा गया है कि अमेरिका चुनावी वर्ष में दूसरे मुल्कों को लक्षित करके अपनी आर्थिक नीतियों में बदलाव करता है। मसलन, बीते कई चुनावों में भारत को लेकर 'आउटसोर्सिंग' का मुद्दा चर्चा में रहा, इस दफा उसके निशाने पर चीन है। उसने चीन से कुछ विशेष पदार्थों के आयात कर में बहुत वृद्धि कर दी है, जिनमें स्टील, बिजली चालित वाहन, बैटरियां, सोलर सेल, चिकित्सा उपकरण और कुछ खनिज संपदा आदि शामिल हैं। स्टील पर कर 7.5 फीसद से बढ़कर 25 फीसद, सेमीकंडक्टर पर 25 से बढ़कर 50 फीसद कर दिया गया। सबसे अधिक अधिक बिजली चालित वाहन पर कर 25 से बढ़ा कर 100 फीसद कर दिया गया है। इसके अलावा, कुछ खनिज संपदाओं जिनमें ग्रेफाइट और मैग्नेट आदि शामिल हैं, पर कर पहले नहीं लगता था, पर 2026 से इनको 25 फीसद की सीमा में ला दिया गया है। राष्ट्रपति पद के अन्य दावेदार डोनाल्ड ट्रंप ने भी कहा है कि वे अमेरिका के सभी प्रकार के आयात पर दस फीसद की दर से कर बढ़ा देंगे, ताकि अमेरिका हमेशा सुरक्षित रहे। अगर अमेरिका में ट्रंप ऐसा करते हैं, तो भारत पर भी विपरीत असर पड़ेगा, क्योंकि भारत का अमेरिका के साथ निर्यात तकरीबन 25 अरब डालर के बराबर है।

दरअसल, चीन अब अमेरिका के लिए ही नहीं, विश्व की दूसरी सभी बड़ी अर्थव्यवस्थाओं के लिए समस्या बनता जा रहा है। इसके पीछे चीन का आर्थिक ढांचा मुख्य कारण है, जो पूरी तरह निर्यात पर निर्भर है। चीन की आर्थिक नीतियों में पिछले दो-तीन दशक से इस बात पर ध्यान केंद्रित किया जाता है कि वहां के सभी कारखाने सौ फीसद क्षमता के आसपास का उत्पादन करें। बीते कई वर्षों से चीन में घरेलू मोर्चे पर नागरिकों की उपभोग क्षमता जीडीपी की तुलना में विश्व के सभी बड़े विकसित मुल्कों में सबसे कम है। यानी चीनी उद्यमों में तैयार पदार्थों की मांग खुद चीन में बहुत कम है, इसलिए चीन को इन्हें विश्व के दूसरे मुल्कों में खपाना पड़ता है। चीन की गलत आर्थिक नीति यह है कि वह

इन्हें कम मूल्य पर दूसरे मुल्कों को निर्यात करता है, ताकि उन मुल्कों का घरेलू बाजार इन पदार्थों के सामने प्रतिस्पर्धा में खड़ा ही न हो पाए।

इसी सोच के चलते विश्व के 173 मुल्कों के साथ चीन का व्यापार मुनाफे में रहता है। मात्र पचास के आसपास मुल्कों के साथ चीन को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर घाटा होता है। इन पचास मुल्कों से बहुतायत में कच्चे तेल की खरीदारी या अफ्रीकी मुल्कों तथा मंगोलिया जैसे राष्ट्रों से बड़ी मात्रा में कच्चे माल की खरीदारी है। इस संदर्भ में गौरतलब है कि वर्ष 2022 में चीन का अंतरराष्ट्रीय व्यापार में मुनाफा 890 अरब अमेरिकी डालर का था, जबकि उस दौरान भारत का कुल अंतरराष्ट्रीय व्यापार, जिसमें आयात और निर्यात दोनों सम्मिलित हैं, 964 अरब डालर का था, जबकि दोनों मुल्क जनसंख्या और कुछ अन्य परिस्थितियों में तकरीबन एक जैसे हैं।

चीन की आर्थिक नीतियों में वैश्विक स्तर पर कोई समानता और एकरूपता नहीं दिखती है। मसलन, चीन का अपनी आर्थिक नीतियों में सिर्फ इस बात पर ध्यान केंद्रित रहता है कि जनता के पास कम से कम वित्तीय तरलता बनी रहे। कोरोना के दौरान विश्व के सभी बड़े मुल्कों ने प्रति व्यक्ति उपभोग क्षमता को बनाए रखने के लिए बैंक दरों में कमी तथा वित्तीय ऋण की मात्रा बढ़ाकर अपने नागरिकों की खरीदारी के प्रति रुचि को बनाए रखा था। मगर चीन ने इसके विपरीत किया। बीते कुछ वर्षों से चीन में जमीन-जायदाद का कारोबार नकारात्मक दौर से गुजर रहा है। कई भवन निर्माण परियोजनाएं बंद हो गई हैं, जिसके चलते कई वित्तीय संस्थान दिवालिया घोषित हो गए हैं। यह भी देखा गया है कि पिछले कई वर्षों से लगातार चीन में प्रति व्यक्ति उपभोग क्षमता में वृद्धि नहीं हो रही है, जबकि व्यक्तियों के पास वित्तीय बचत उपलब्ध है। शायद इन्हीं के चलते चीन अब कुछ भयभीत है।

अमेरिका के बाइडेन प्रशासन ने चीन के विरुद्ध यह कदम एकाएक नहीं उठाया है। बीते कुछ समय में वैश्विक स्तर पर चीन की आर्थिक नीतियों की मुखालत बड़े स्तर पर देखने को मिली है। बीते अप्रैल में जर्मनी के राष्ट्रपति ने अपनी चीन की यात्रा के दौरान इस बात को बड़ी मुखरता से रखा कि चीन की उत्पादन क्षमता प्रशंसनीय है, लेकिन इसके चलते विश्व स्तर पर प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता कमजोर नहीं पड़नी चाहिए, अन्यथा इसका नुकसान सभी को उठाना पड़ेगा। चीन ने बीते एक दशक में जलवायु परिवर्तन के मुद्दे को बड़ी तेजी से अपने विनिर्माण क्षेत्र में शामिल किया है। इसी के चलते उसने अपना सारा ध्यान बिजली चालित वाहन, सौर ऊर्जा संयंत्र आदि बनाने पर लगा दिया। देखने को मिला है कि चीन की विभिन्न मोबाइल उत्पादक कंपनियां भी बिजली चालित वाहनों के निर्माण में उतर रही हैं।

चीन की इन आर्थिक नीतियों के चलते विश्व के सभी बड़े विकसित मुल्क आशंकित हैं, क्योंकि उन्होंने खुद के आधारभूत ढांचे में पिछले एक दशक में जलवायु परिवर्तन के मुद्दे को लेकर आमूलचूल परिवर्तन किए हैं और सभी घरेलू मोर्चा पर वे अपनी मांग को खुद ही पूरा करना चाहते हैं, पर चीन के चलते उन्हें अब यह संभव होता नहीं दिख रहा। ऐसा लग रहा है कि वैश्वीकरण के दौर में मुक्त व्यापार क्षेत्र के चलते चीन के उत्पादों की जोरदार आपूर्ति उनके घरेलू बाजार को बुरी तरह प्रभावित कर रही है। तकरीबन एक दशक पूर्व इसी तरह चीनी फर्नीचर की अमेरिकी बाजार में एकाएक आपूर्ति बढ़ गई थी, जिसके चलते अमेरिका के घरेलू फर्नीचर बाजार में 1.5 लाख अमेरिकी बेरोजगार हुए थे, जिसे बाद में ट्रंप ने अपनी आर्थिक नीतियों में शामिल किया और उन्हें अपना मतदाता बनाया था।

लापरवाही की आग से झुलसते हमारे शहरों का बुरा हाल

के के पाण्डेय, (प्रोफेसर, अर्बन मैनेजमेंट, आईआईपीए)

राजकोट (गुजरात) के गेमिंग जोन में लगी आग में लगभग 30 लोगों की मौत की टीस अभी कम भी नहीं हुई थी कि राजधानी दिल्ली के एक अस्पताल में लगी आग कई नवजात पर भारी पड़ गई। आंकड़े तो ये भी हैं कि पिछले दो साल में दिल्ली के 66 अस्पतालों में आग लगने की घटनाएं घट चुकी हैं। इसका अर्थ है कि जिन जगहों पर हम जीवन की उम्मीद में जा रहे हैं, वे भी हमारी जान पर भारी पड़ सकती हैं। दिल्ली का उपहार सिनेमा अग्निकांड, पुरानी दिल्ली के लाल कुआं इलाके में एक केमिकल गोदाम में लगी आग, फिल्मिस्तान अग्निकांड जैसी घटनाएं हमारी यादों में अब तक जिंदा हैं।

ऐसी आगजनी आमतौर पर तभी होती है, जब नियमों का पालन नहीं किया जाता। या तो इमारत अनधिकृत तरीके से बनाई गई होती है या फिर उसमें सुरक्षा के पर्याप्त उपाय नहीं किए जाते या फिर सुरक्षात्मक उपायों की निगरानी नहीं होने के कारण वे वक्त पर काम नहीं करते। मुश्किलें तब बढ़ जाती हैं, जब इस तरह की इमारतें घनी आबादी वाले क्षेत्रों में होती हैं। तब ऐसी आगजनी कहीं अधिक जानलेवा साबित होती है। स्पष्ट है, आगजनी के लिए काफी हद तक नियोजन और प्रबंधन की व्यवस्था में खामी उत्तरदायी है। अगर प्रबंधन की नियमित व्यवस्था हो, लाइसेंस आदि ससमय लेने के प्रयास हों, स्थानीय प्रशासन द्वारा निगरानी की उचित व्यवस्था हो, तो आगजनी की घटनाएं काफी रोकी जा सकती हैं।

सवाल मानसिकता का भी है। औद्योगिक इमारतों में नियमों की अवहेलना के कारण आमतौर पर खिड़कियां नहीं बनाई जातीं, सीढ़ियों की पर्याप्त व्यवस्था नहीं होती, ज्वलनशील पदार्थों विशेषकर गैस सिलेंडरों के भंडारण को लेकर उचित सावधानी नहीं बरती जाती और निकासी के रास्ते पर्याप्त चौड़े नहीं होते। इन सब वजहों से छोटी-सी आगजनी भी जान-माल का भारी नुकसान कर जाती हैं। आगजनी कोई नई परिघटना नहीं है। शहर से लेकर गांव तक आग लगती रहती है। गरमी के मौसम में हवा के संयोग से गांवों में आगजनी की ऐसी-ऐसी घटनाएं घटती हैं कि कई घर उनमें स्वाहा हो जाते हैं, लेकिन वहां आमतौर पर इंसानी जान बचा ली जाती है।

वास्तव में, बचाव के उपाय हमें अपने तर्क भी करने होंगे और प्रशासन के स्तर पर भी। इस मामले में सरकारी एजेंसियों में समन्वय बहुत आवश्यक है। पेच यह है कि योजना बनाने का दायित्व किसी अन्य एजेंसी पर होता है और उसे लागू करने का दायित्व किसी अन्य एजेंसी का। उसके प्रबंधन की जिम्मेदारी तीसरी एजेंसी संभालती है। दिल्ली में ही योजना दिल्ली विकास प्राधिकरण (डीडीए) बनाता है, जबकि बिल्डिंग लाइसेंस नगर निगम के हवाले है। फैक्टरी लाइसेंस दिल्ली प्रशासन देखता है। इन अलग-अलग एजेंसियों के बीच समन्वय बने, तो उन लोगों को राहत मिल सकती है, जो नियमों का पालन तो करना चाहते हैं, मगर इनकी जटिलताएं उनकी मंशा पर भारी पड़ जाती हैं। अब ऑनलाइन व्यवस्था की जा रही है, ताकि सभी एजेंसियां एक प्लेटफॉर्म पर आकर मामले को निपटा सकें, मगर इसके लिए भी समन्वय जरूरी है।

जाहिर है, उपाय तो हैं, लेकिन उनके क्रियान्वयन के स्तर पर भारी कमी है। दिल्ली की तुलना में मुंबई, पुणे के लोग कहीं अधिक जागरूक जान पड़ते हैं, जो इन मसलों को उठाते रहते हैं। हालांकि, अभी दिल्ली के एक अस्पताल में जो आगजनी हुई है, वहां की अनियमितता को लेकर स्थानीय लोग आवाज उठाते रहे हैं। मगर जुझारू नेतृत्व का अभाव उनकी आवाज को दुखद अंत की ओर ले गया।

दिल्ली-एनसीआर की ऊंची-ऊंची इमारतों का हाल और भी बुरा है। इनमें सुरक्षा उपायों की बात तो छोड़िए, कई बार निर्माण-कार्य शुरू करने तक की अनुमति नहीं ली जाती। ज्यादातर इमारतों में सही समय पर 'कम्प्लीशन सर्टिफिकेट' नहीं लिया जाता, यानी स्थानीय प्रशासन द्वारा मंजूर प्लान के तहत निर्माण-कार्य की स्वीकृति नहीं ली जाती या खरीदारों को 'पजेशन' देने के बाद यह सर्टिफिकेट लिया जाता है। ऐसे में, उनमें अगर कोई दुर्घटना घटी, तो भुगतना आम लोगों को पड़ता है, इसलिए ऐसे मामलों में भी आम लोगों में जागरूकता कहीं अधिक जरूरी है। उनको अपने हितों की आवाज उचित मंच पर लगातार उठानी चाहिए, तभी ऐसे हादसों से वे बच सकेंगे।
